भविष्य मेरी आँखों में

अक्षय गोजा

सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली-110007

लेखक

प्रकाशक — सन्मार्ग प्रकाशन
16 यू बी, बैंग्लो रोड
जवाहर नगर, दिल्ली-110007

मूल्य — 80 00

संस्करण — सन् 2000

आवरण — निक्रात

शब्द-संयोजन — क्वालिटी प्रिंटस दिल्ली 110093

मुद्रक — आर के ऑफसेट
उत्थानपुर नवीन शाहदरा दिल्ली-110032

प्रकाशकीय

विश्व भर म मानव जीवन सघर्षों से
परिपूर्ण है। हर जीवन म अपना-अपना
कठिनाइया हैं। एक जीवन दूसर स
भिन्न हाता है। किन्तु सभी क जीवन में
सघर्षो को सफल बनाने के लिए
अपरिहाय है मन की दृढ़ता।

प्रत्येक मानव का मन एक जसा है-
वे ही भाव, विचार, अनुभूतिया, सकल्प।
रग रूप-जाति-वर्ग-देश स मन-मन
के बीच कोई भेद उत्पन्न नहीं हाता।
हर जीवन के हर तरह के सघर्ष स
इसका अटूट सबध ह।

विश्व विशाल ह, किन्तु मन उसस भी
विराट हे। मन में समाई शक्ति स
हर सृजन हाता हे। मन स
बडी वस्तु कुछ भी नहीं। [illegible]
है कि मानव अपने मन का [illegible]

इसी सत्य को रेखांकित [illegible]
मानव जीवन के सघर्षों का
विभिन्न आयामों, भावनाओं [illegible]
शक्तियों के साथ प्रस्तुत [illegible]
श्री अक्षय गोजा के [illegible]
'भविष्य मेरा आखों म' [illegible]
इक्सठ कविताए।

भूमिका

कविता और कामयाबी

क्या कविता करना कामयाबी है ?
मेरा मतलब है, सुदर कविता करना।
यह प्रश्न म क्या सोच रहा हू ?
क्या इसलिए कि इन दिनो
कविता क अलावा म कुछ नहीं कर रहा हू ?

अगर होता नहीं ह अन्य कुछ अच्छा,
काम ढग का,
तो क्या बुरा हे कविता करते रहना ?
यह भी तो एक काम हे
अच्छा भी हे
ढग का भी है।
क्या हर कोई कर सकता है यह काम ?

मे करना चाहता हू काम कई,
पर यह सहज कहाँ हे ?
सहज कविता करना ही लगता ह
बाक़ी तमाम बेढब ।

कभी खुश हा लिए
बस यो ही

तो कविता करने लगे।
कभी उदास हो गए
बस यों ही,
तो कविता करने लगे।
कभी कोई याद आए
बस यों ही,
तो कविता करने लगे।
कभी कोई ख्याल आए
बस यों ही,
तो कविता करने लगे।

कविता करने के लिए
कोई तामझाम नहीं चाहिए
कोई संगठन नहीं चाहिए
कोई उत्सव नहीं चाहिए
कोई योजना नहीं चाहिए
धन-दौलत नहीं चाहिए।

बस थोड़ी सी अक्ल चाहिए
थोड़े बहुत ख़्याल चाहिए
कुछ तमन्ना चाहिए
छोटी मोटी कलम चाहिए।
फिर क्या है ?
किसी बहाने सही
वक्त काटने की ख़ातिर सही
बोरियत मिटाने के लिए सही
दिल का नक्शा सुधारने को सही
कविता करने से बेहतर शगल कोई नहीं है।

फिर यह प्रश्न आता है—
कविता करना क्या कामयाबी की निशानी है ?
मामला टेढ़ा है।

इसमे उलझे तो
कही ऐसा न हो,
कविता करना ही भूले।
कविता करना भूल गए तो
कहीं ऐसा न हो,
खुद को ही खो दे।
ऐसा हुआ तो
कामयाबी क्या ?
यह जिदगी क्या ?

पर इस लफडे मे हम क्या पडे ?
क्यो न मजे से
कविता-धारा मे बहे,
बहते रहे।

—अक्षय गोजा

चाँदपोल गेट के पास
जोधपुर 342001

अनुक्रम

मनुष्य की गरिमा

सब कुछ हाथ में नहीं इसान के।
अगर होता तो शायद जाने कितनी
मुसीबते मोल ले लेता।
फिर भी इस सच से,
सर्वशक्तिमान न होने की वास्तविकता के बोध से
ठेस पहुचती है मनुष्य की गरिमा को।

मगर यह सोचना कि
हर चाह हा जाए पूरी
दुराग्रह, छल, अविवेक नहीं तो क्या है ?
अविवेक से नहीं बनता सकल्प कभी
भटकी हुई हवा बहती है।
अस्त-व्यस्त जाने कहा मारती थपेडे
कर जाती है दूसरो को भी अस्त व्यस्त।
भटकी हुई हवा नही होती मनुष्य की गरिमा।

पहले विवेक
फिर सकल्प
आर तब अनवरत सघर्ष से
हासिल होती ह हमशा सफलता
कहानी बनती है मनुष्य की अजेयता की।

नवजागरण

कहा विशृंखलित हो गई है शक्ति मेरी ?
क्यो होता है शुबहा मुझे ख़ुद पर ही ?
क्या नतीजा है यह निरतर विफलताओ की करतूतो का ?

हा, मैने ख़ुद को नष्ट किया इस हद तक
कि रहा नहीं भरोसा अपने बुद्धि-बल पर।
हर पल ग्रस्त रहता हू चिताओ, व्यथाओ, आशकाओ स
त्रस्त हू लोगो क भावो, विचारो, व्यवहारो से।
इन्हीं मे व्यस्त,
कुछ भी करने की सोचने मे असमर्थ, अशक्त।

गिर गया हू ख़ुद की नजरो मे
टूट गया हू बहुत भीतर तक,
ऊपर से यह कि
अह मजबूर करता है—
अपनी टूटन, आत्म क्षति, सकल्पहीनता
दुनिया से छुपाए रखू,
सदा अपनी सुनहरी छवि प्रस्तुत करता रहू।
इस थकान और तनाव-भरे अनवरत प्रयास म
और भी टूटता विखरता जाता हू,
जो सिर्फ मै जानता हू।

और जाने भी कौन ?
ऐसा लगता है
मैं अपनी सच्चाई ख़ुद से ही छुपाने की
कुचेष्टा कर रहा हूं।
अपने प्रति ईमानदार न होने का परिणाम है
ख़ुद को अधिकाधिक अशक्त, घृणित, कुत्सित करते जाना।

यह कैसी ग्रंथि है
जिसमें फंस कर मैं अधिकाधिक कसा जा रहा हूं,
जैसे हो रहा हो मेरा मथन
खालीपन, व्यर्थता, निकृष्टता का मथन
निकलता कुछ नहीं
सिर्फ होता है आत्म हनन।

रेंगते कीड़े
मृतप्राय शिकार
मौत को तरसते छटपटाते घायल प्राण
क्षत विक्षत शव–
कुछ इसी तरह की स्थितियों में
खुद को कल्पित करता रहता हूं।

जानते लोग यदि मेरी दारुण स्थिति
और नाक भौं सिकोड़ कर
व्यंगभरी मुसकान बिखेर कर
कुछ ओछे खोटे दुर्वचन बोल कर
अपनी प्रतिक्रियाएं व्यक्त करते,
तो शायद मैं अपने निकट इतना पतित नहीं होता।

पतित हो कर भी पावन होने का स्वांग
कालिमा छुपा कर रोशनी दिखाने का प्रपंच
खुद को लुप्त कर छवि का प्रस्तुतिकरण
यह दंभ पाखंड, आत्म-वंचन, मिथ्या प्रदर्शन

कैसी विवशता
कसा अभिनय अह का
जो जीने देता न मग्ने देता ह,
छुप कर छटपटान क सिवा काइ छूट नही होती।

ऐसी दारुण स्थिति
क्या आर रिसी की होगी ?
तव कैसे जागेगी सकल्प शक्ति ?
सकल्पहीनता के रहते कैस मिल पाएगी राह कोई ?
विना राह चलना कसे होगा ?
विना चले कैसे गति,
मुक्ति कैसे होगी ?
यह जीवन क्या बना रहेगा
सदा सडा-गला, वदबुआता पोखर ?

जीवन की चुनौतिया, कठिनाइया, दायित्व
ठलते है मुझे निरतर, वार-वार
मारते है धक्के कर्म-युद्ध के लिए।
इन चुनातिया से पलायन का विकल्प नहीं कोई
जीवन की समाप्ति के सिवा।

जीवन समाप्त करने की सोचते सोचते भी
थक गया हू,
आजिज आ गया हू।
कार्यरत तो होना पडेगा
मुकावला चुनोतियो का करना होगा
आज नहीं तो कल
जीते-जी या मर कर।
शायद ऐसे ही मेरे मुदा मन मे हा पाए
सकल्प की प्राण-प्रतिष्ठा
विजय के लिए नही तो
लडते-लडते मर जाने के लिए ही सही।

शायद तभी य सार अहसास, य गाठ
निरतर ख़ुदकुशी का पीड़ा
कहा पीछ छूट पाएग
मुझस अलग हा जाएग।
म अपन सच्च अभिन्न स्वरूप म व्यक्त हाकर
वास्तविक आर मुकम्मल तार पर जी पाऊगा,
अपन अस्तित्व का दुनिया का व्यक्त कर सकूगा।
यहा मरी मुक्ति आर
जगत क उन्नयन का सापान बनगा।

चैतन्य

बना हुआ था जड़-सा
मन बरसों तक,
हद यह कि
भान हो पाया अभी अभी
जब लौटने लगा चेतना की ओर।

भयाक्रांत, दीन हीन, शापग्रस्त-से
निर्बल, अस्तित्त्वहीन से मन मे
प्रतिबिंबित होते थे
सारे वजूद, सारे क्रियाकलाप,
पर खुद की कोई छाप,
प्रेरणा या सवेग नहीं थे।

अब जागृत करनी होगी
शक्ति तेजी से,
ताकि वक्त का ख़ामियाज़ा
हो सके पूरा।
बने मन अधिकाधिक चैतन्य
और शक्तिसपन्न,
ताकि दे सके मुहतोड़ जवाब
सभी चुनौतियो का।

किस पर

तुझ पर ध्यान करना
मतलब, तेरी बातों में आना
उनमें खो जाना
दुनिया को गवाना
ख़ुद को बिसराना।

दुनिया को गवा कर
कोई कैसे जी सकता है ?
ख़ुद को भुला कर
काम किए बगैर
संघर्ष किए दुख सहे बिना
जीवन कैसे गुजारा जा सकता है ?

ध्यान रह सकता है
एक पर ही।
किस पर रखा जाए
तेरे शगूफों पर या
जीवन-जगत पर ?

नि सगता

अभी जीवन मे कोई सगी-साथी नहीं ऐसा
कि निश्चित हुआ जा सके
सहयोग पाने के सबध मे।

अनुभव हो रह है अजीब अनिश्चितता के
सहयोग मिलता हे अनपेक्षित व्यक्ति या तरीके से
जहा हो विश्वास, सिफ धोखा मिलता ह।
निर्भर रहता हू हमेशा ख़ुद पर
यानी अपने विश्वास पर।

पहले सहयोग ही सहयाग था
ढेर सारे परिचित आर मित्र थे।
एक तूफान आया ऐसा
कि सब-कुछ छिन्न भिन्न हो गया,
वास्तविकता आ गई सामने
सहयोग, सगत कुछ नही था
महज मेरा इस्तेमाल था।

त्याग दिया बरहम हो कर
हर सहयोग, सद्भावना, सगत को।
नतीजतन, कोई सगी-साथी नही रहा।

कभी-कभी अभाव महसूस होता है,
लेकिन अक्सर इस तरफ ध्यान नहीं जाता।

अद्भुत सा लगता है
कि बिना सहयोग या साधन भी
काम सभी बनते जाते हैं।
ख़ुद ही निरंतर
सफलता के लिए विचारता, प्रयास करता हूं।
निःसंगता का आदी हूं
हमेशा मस्त रहता हूं।

निराला अदाज

मेरा लक्ष्य बहुत ऊचा हे
या रास्ता बहुत लबा और विकट
या मेरी आदत ऐसी है
कि सुगम रास्ता ढूढ़ नहीं पाता ?
या फिर विकट, लबा, दुगम सही
रास्ता सुनिश्चित
दीघफलदायी आर सुदृढ ह।

हा, ऐसा ही दिखता है।
मजिल भल ही मिले
देरी से,
दिक्क़त से,
लेकिन मिलेगी जरूर
आर निराले अदाज मे।

त्राण

यह कैसी जिद्दोजहद ह ?
कितना बेचेन हू,
परेशान कितना।
उन शक्तियो से लडना
कितना विकट ह।
क्या खोऊ शांति ?
मगर कोइ राह नही पलायन की
कर्त्तव्य से विमुखता सभव नही
सघप क सिया सकल्प नही।
जीवन-जगत की हर उलझन स
जिद्दोजहद से ही आखिर
मिल पाएगा त्राण।

जीवन का भेद

मिल रही ह कितनी राहत
हात हुए मुक्त
एक वडी चिता से
सताती रही मुझे
हाश सभाला जवसे,
मरे वजूद क साथ ही जनमी थी जसे।

एक समस्या
जो घटती नही थी,
चिता वढती रही।
यही वन गई
एक समस्या।
समझता रहा
चिता छोडने का मूल्य
समस्या छोडने के तुल्य
हल नही समस्या का
ता अथ नहीं काइ जीने का।
हल की ख़ातिर
समस्या को लगाए हुए सीने स,
चिता म ही
साता रहा, जागता रहा

वर्षो तक, जीवन-भर ।

एकाएक प्रेरणा मिली
कि मुक्त होना है चिंता से,
इरादा कर लिया
जुट गया प्रयास मे।
ज्यो ज्यो होता रहा मुक्त
महसूसता रहा राहत,
खुलता गया भेद जीवन का
मिलता गया जीवन नया।

बोध के पश्चात

कहीं कोई शार्टकट नहीं जीवन म।
कैसी भी राह हो,
पूरी हाती ह
मेहनत मशक्कत स ही
गुजर कर हर दौर स
सभी बाधाए पार करते हुए
व्यापक समय ल कर के।

बहुत काफ्त होती है कई बार
विलब असह्य हो उठता है
तारी हो जाता है अहसास पिछडेपन का।
परतु लाचारी महसूसने पर भी
कोई विकल्प नही होता।
इसी तरह चलते रहने,
हर हाल म चलने रहने के सिवा।

फिर कभी बाध होता ह—
पूरी मेहनत स फल पान म ह आनद विशेष
काइ कसर बाकी नही रहती साधना म
फल पूरी पात्रता से हासिल होता ह
कोई चोर नहीं मन मे

किसी अज्ञान का अधेरा नही रहता।
गति चाहे तीव्र न सही,
मति मुकम्मल रहती हे।
मुश्किले आने वाली राहा की
हल होती हैं आसानी से।
गढता दिखाई देता हे भविष्य
अधिकाधिक सुरक्षित
अधिकाधिक उज्जवल।

बोध के पश्चात
भूल जाता हू
शार्टकट के बगेर हो रही
तमाम कठिनाइया ओर परेशानिया,
नए-नए सपनो मे
खो जाता हू।

विजय का नशा

नहीं-नहीं, जीजिविषा नहीं।
यह होती है जीने की इच्छा
हर हाल म जी सकें, जीते रहे।
मगर यह प्रबल अभिलाषा का संवेग है
योद्धा के सकल्प सा
तमाम ख़तरों, अवरोधो का सामना करते
जान हथेली पर लिए निरतर जूझते रहना।

हा-हा, यही सवेग पाता हू अपने भीतर,
तमाम कमजोरिया विफलताओ, भटकावो के विरूद्ध
सघर्परत आगे बढता जाता हू
निश्चित विजय की ओर।
मुझे विजय का नशा हे
नशे के लिए कमजार से कमजोर आदमी भी
क्या नहीं कर सकता ?

जीवन-राह

जीवन-राह पर चलते हुए
मंजिल की तरफ बढते हुए।

भीड-भाड म गुजरते हुए
धक्मपेल से निकलते हुए।

हर ख़तर का परखत हुए
मत्र सयम का जपते हुए।

दायित्वा म दहकते हुए
नूतन सकल्प रचते हुए।

इद्रधनुप को लपकते हुए
जमीन पर क़दम धरत हुए।

बीहड से नित जूझते हुए
बाधाआ को चीरते हुए।

बिना थके झुके बढते हुए
निज लक्ष्य पर पहुचत हुए।

अपर्याप्त

जीवन म दुख ही दुख उठाए
खूब गम ढोए।
बस यही समझा
कि समथ बन सकू दुख सहने म,
कसा भी हादसा
कोइ भी सदमा
बदाश्त कर जीवन जारी रख सकू।
यह कर सकने पर खुद को सफल समझता रहा
परतु जिदगी नीरस, ऊबाऊ होती गइ।
यह ठीक है कि
दुख का सहना शक्ति का सबूत ह,
परतु यही सहनशक्ति पयाप्त नही
जिदगी का पयाय नहीं,
दूसरा पहलू भी
छोटे-बडे सुख भी है
प्रगति के पथ भी है।
हा, मन अब इस तरफ भी गया है।

चकित

तुमने नहीं किया
मने ही हासिल की
केद।
मोहक लगी थी।
लगती हे अब भी
मगर चद लम्हा के लिए
फिर वही यातना-भरी।

छुट्टी मिली
कुछ अरसे के लिए
तो साचा
मिले हमेशा के लिए
ताकि हो पूर्ण मुक्ति।

सोचता रहता था—
कब आएगी वह घडी ?
आई तो चकित हू—
पता भी न चला।

अतहीन यातना

जब आखो मे ही रोशनी नहीं ?
अधे की लाठी कौन बनेगा ?
यहा हाक रहे ह सभी
अपनी-अपनी लाठी से।
दुनिया लगती
बेरहम, बेतुकी, बेनूर।
कोई आकर्षण, चाह, लक्ष्य नही।
आसुओ, घुटन, अंधियारो मे
घिसटते हुए ले रहा हू सासे।

यह जीवन नहीं,
चलता फिरता रूप है
साक्षात मृत्यु का।
जाने कब मिलेगी मुक्ति
इस रौरव नरक,
अतहीन यातना से ?

यह ज़िंदगी

जैसा चाहता था
या अभी कामना करता हूँ,
वैसा हुआ या होता है?
जाने क्या, क्यों, कब
सब अजीब सा हो जाता है।
किन्हीं अदृश्य इशारों पर चलना पड़ता है
लगता नहीं कि जीवन मेरा है।
बस इतनी व्यवस्था से गुजर
काम करता रहता हूँ।

रारव नरक म जीने की तरह।

सदा पछताता रहता हू—
वृथा आया दुनिया म
वृथा चले भी जाना हे।
किसन चाहा ?
आना और जाना
कुछ हाथ मे नही।
किसका काम हे आख़िर
यह जिदगी ?

उलझाव

जगती रहती उम्मीद
बार-बार करिश्मे का।
दिखता है यही
रास्ता आसान-सा
कामयाबी का।
उलझी हुई हमेशा
रहती रही है दुनिया
चमत्कार को नमस्कार।

शायरी के सनम-सा

दुनिया की खुशी
उसकी नाराजगी,
इसी की करते-करते चिंताए
गुजर गए बहुमूल्य बरस
कितन ही जिंदगी के।

दुनिया का क्या,
जान कब ख़ुश रह ?
जाने कब नाराज हा ?
नाराज हात होते ख़ुश,
ख़ुश रहत रहते नाराज हो।
ख़ुश हो ता क्या दे द ?
नाराज हो ता क्या बिगाड़ ल ?

मरी छवि धुधलाई तो कभी चकाचाध हुई।
जब-जब की अजित सफलताए
बधाइया, मुसकराहटें, प्रशस्तिया मिलीं।
जब-जब खाइ ठाकर विफलताआ की
उपहास निन्दा उपेक्षा व्यग मिल।

म क्या सबस माह है
सनूर ऐसा ही
गनिया स दुनिया का—
शायरी क सनम सा।

आवाज सुनी

युग-युग के बाद
उसकी आवाज सुनी—
मीठी-मीठी सी
सुपरिचित चिर परिचित
अनुपम, अद्भुत, अनन्ता
रस-आनन्द का अजस्र स्रोत
प्रेम की सरस सलिला
निखिल विश्व में एक ही आवाज।

उसके बगैर
नीरवता श्मशान सी व्याप्त था
मन के हर कोन में
निष्क्रियता, निष्प्राणता निश्चेतना।

पहली कविता

पहली कविता लिखी थी मने मेले पर
सातवी कक्षा मे पढते हुए।
बहुत आनदित हुआ था मडार क मल म
उन दिना मेले, खेल, तमाशे खूब हाते थे।
फिल्म भी चलती थीं
मगर मजा जीवत मेला म ही आता था।
मडार का मेला हमारे यहा सबसे मशहूर, सबस बडा था

स्कूल म निकलन वाली थी हस्तलिखित पत्रिका
म चाहता था कि उसमे कुछ जरूर लिखू।
लेख लिख सकता था,
पर उसम मजा नही आता था।
समझ नही पा रहा था कि क्या लिखू ?
उन्ही दिना गया था मडार के मल म
खूब घूमा खूब देखा खूब खुश हुआ था।
इसी का जाहिर कर दिया था
पहली बार कविता म।

वह कविता अब कहा है ?
उसका प्रति भी नहीं रखा।
कब ज्ञात था कि म कवि बन जाऊगा

लाग पूछग—
आपने कब लिखना शुरू किया ?
पहली कविता कानसी थी ?

मालूम होता
तो तसवीर की तरह मढा कर रखता।
याद भी नहीं
जरा-सा भाव ध्यान म रह गया है,
शायद इसलिए कि
पहली कविता थी।
उसे लिख कर इतनी ख़ुशी हुई थी
कि आज सैकडा कविताए लिखने के बाद भी कहा ?

आख़िर म आपका एक राज की बात बताऊ ?
कविता म केला खाने का ख़ास जिक्र था।
शायद विशेष ही मीठा रहा होगा
अमृत सा स्वाद मेरी जिह्वा म अमर हो गया हो !

मुनासिब

नइ-नइ वात आती ह सामने
कभी भली, कभी बुरी।
भली दती हे रोमाच, हर्ष
बुरी करती ह सोचने को मजबूर।
चलता रहता यह
सिलसिला जगत का,
जीवन आग बढता रहता है।

मुझे यह सुहाता नहीं।
ठीक स नही जानता कि क्या ?
क्या जो चाहता हू, नही हो रहा ?
जा चाहता हू,
ठीक भी ह या नही ?
जो हो रहा हे
क्या वही ठीक आर हितकर ह ?

मुझे अच्छा नही लगता
ता क्या कर रहा हू ?
क्या आत्माभिव्यक्ति की खातिर ?
क्या यह पयाप्त ओर सही ह ?
जाने क्या-क्या शकाए ह

काई समाधान दिखता नहीं।
तब जो हो रहा है,
उसके प्रति असतोष क्या
मुनासिब है ?

स्मृति जगे

बीते वर्ष सेवा-निवृत्त
करे अलविदा तृप्त संतप्त

कइ इब्तिदाए तुमने की
निभाए याद, कुछ नही भी

सुख दिए अनेक, दुख भी कइ
नए नए अनेक अनुभव भी

उपलब्धिया सग विफलताए
एसे हम बहुत सीख पाए

तुम तो स्वण-अतीत बन गए
बार बार तेरी स्मृति जग

लेते रहो मजे

ऊब नही
उलझन भी नहीं
किंचित व्यथता का वाध ह
और लगता हे,
जिदगी म कुछ मजा नही ह।

हा, ऐसा ही हाना ह
जव काम ता हा नही
जजाल ही जजाल हा।
खूब मजा आता ह काम म
वहुत थकान हा तव भी,
काम अपन आप म उपलब्धि जा ह।

जजाल मगर काम करन नही दता
उसे जरूरत ही नही ह काम की
वह ता खोझ परेशानिया कुठाए उगाता ह
ऐसे म मजा कहा आता ह।

लेकिन यह भी एक दार ही तो ह जिदगी का
दार चलत रहत ह तरह-तरह के।
अच्छा यह ह कि
लत रहा मज
हर दार क।

पछतावा

कइ यार
एकाएक ध्यान जाना ह
अपनी भूला पर,
तब साचने ह—
काश ! करत नहीं य भूल
तो जीवन का रुख
होता कुछ आर ही !
फिर ख़्याल आता ह—
कौन जाने, वो रुख सही होता ?
वतमान दार से बेहतर हाता ?
भूल जान बूझ कर तो की नहीं थी,
उस वक़्त की समझ के मुताबिक़
ठीक ही किया था।
हर मनुष्य की होती है अपनी सीमाए।
फिर पछताना क्या ?

थपेडे

जाने क्या, दिल डूबा जाता ह इन दिना।
तनाव सा छाया हुआ हे दिमाग पर।
शायद जिम्मेदारी का अधिक अहसास
या कोई अत्यधिक खुशी मन म दबी हुइ।

घार निराशा के बादला म
एकाएक खुशी का चाद चमकना
हतप्रभ ही नही
तनावयुक्त भी कर देता ह।

काम किए जाता हू ठीक ठाक
मगर लगता ह कि कहा कुछ कमी ह,
कोइ चूक-सी हो रही हे।
आने वाली चिता का आभास
या कोइ साया बढ रहा मन मे
या किसी तूफान का इतजार ?

कही भागन का नही
डटे रहने, सम्मान रखने का जी हे।
कुछ हाने वाला है
या कुछ क्यो नहीं होने वाला ?

आशंकाओं की उद्विग्नता भी।

तरह-तरह की भाव-तरंगो से
थपेड़े खा रही जीवन की नाव।
शायद डूबेगी तो नही,
मगर छाई हुई है गहरी उदासीनता भी।

मार

क्या होगा ?
केसा होगा ?
होगा भी या नही ?
बार-बार ये प्रश्न
करते ह धमाक़
मन क आगन म।
बासुरी नही बजती ख़ुशी की
खुशबू नहा बिखरती मुसकाना की।
जीवन लगता ह मृत्यु से बदतर
दुनिया नऋ स भी भयावह।
कोइ सजा सी काट रहा हू
अनवरत सहत हुए
मार चिताआ की।

क्यो हर बात मुझे समझ मे देर से आती है

जब-जब कोई अवसर मिलता है
मै हमशा चूक जाया करता हू,
क्योकि बात मेरे समझ से परे होती है।
बहुत अरसा बीतने के बाद
समझ मे आती है,
तब अवसर नहीं मिलता।
इस प्रकार मेरा ज्ञान तो बढता जाता है,
परतु म हमेशा हर बार पिछडता जाता हू।

इस अपनी जिदगी को मै क्या कहू,
जिसमे कुछ हासिल नही ज्ञान के सिवा ?
ज्ञान भी ऐसा,
जो निश्चित विफलता का ह
तारक नहीं, जो मारक हे
मार्ग दर्शन करने वाला नहीं,
जो पीडा देने वाला
पछतावा देने वाला है।

मुझे अपनी जिदगी लगती है
खोखली
दुख भरी

बोझिलता

एक बोझ सा है दिल पर
ठीक से नहीं पता
कि किस वजह से है।
ज्यादा सोचने पर बढ़ जाता है
सोचे बगैर मगर रहा भी नहीं जाता।

आखिर स्थिति पेश आ ही गई
शायद जिसके कारण बोझ था दिल पर।
लेकिन बात कुछ और ही नजर आई
खुशी मिली वो, जो दबी हुई थी
बोझिलता जाने कहीं काफूर हो गई
होने की थी जो आशंका कुछ नहीं हुआ।
जो भी हुआ, अच्छा ही हुआ।

भविष्य के सपने हस्वेमामूल फिर
बेइतिहा सताने लगते ह,
जिन्हे साकार करने म
ख़ुद को जुटा हुआ पाता हू।

भविष्य
सिर्फ भविष्य
मेरी आखा मे बसा,
शायद मेरा भविष्य बहुत उज्जवल हो
या जीना भविष्य की साधना म ही
मेरी नियति।

असफल-सा

कभी-कभी सोचता हू—
कही म असफल तो नहीं हू ?

मेरा
एक लबा सिलसिला है
प्रगति के कदमो का
अवरोध हटाने का
गलतिया स सीखने का।

मै हर समय जुटा रहता हू काम मे
इस हद तक कि
सफलता की खुशिया भी नही मनाता।
तुरत चल पडता हू नए सघर्ष की राह पर।

शायद इसीलिए कभी कभी
उभर आता ह यह विचार—
कहीं म असफल तो नहीं ?

व्यवहार

उस दिन हुआ प्रीतिकर आश्चर्य
मिट गया खुद के प्रति पूर्वाग्रह।

वेसी स्थितिया मे
आरा को देखता था
करते हुए सहज व्यवहार।
मेरा व्यवहार
भिन्न, रूखा-सा होता था।
धीरे धीरे महसूसने लगा
कि कोई कमी हे मुझमे।

वैसे हर मामले मे मेरा व्यवहार भिन्न ही होता था।
जन्म स अभ्यस्त था
यही सहज, स्वाभाविक लगता था
मिलता था सुख हमेशा।

परतु सदर्भ विशेष मे
मरी भिन्नता सहज, उचित नहीं लगती थी।
कारण खाजा ता
दूसरा आर खुद की परिस्थितिया म अतर को जिम्मेदार पाया।
तुलना करने पर निष्कष निकला

जीवत

खुल रहा है धीरे-धीरे
मन का द्वार।
कभी तूफान आया था एसा
कि अवरुद्ध हो गया प्रवश
ताजी हवा का,
कही नही रहा शोर
नये भावा, विचारा, कामनाआ का
मन हा गया मृतप्राय।
वर्षो तक द्वार बद रहा
जग लगता रहा।

आखिर क्रियान्वित हुआ
नियम प्रकृत्ति का—
पाक आने लगे
ताजी हवा क
तेजी स, निरतर
शुरू हुआ सिलसिला
द्वार खुलन का।
पूरा खुल जाएगा
मन जीवत हा पाएगा।

वह खुद करेगी चिता अपनी।
मुझे तो बस चिताविहीन होना ह।

ऐसा सपना

कि डर नही रहेगा
मार्ग नया नया प्रशस्त होगा
मन खुशी के गीत गाने म मगन
जीवन सुदर समदर होगा।

नया जीवन

चाह

चाह चीज बुरी होती है
ओर अजीब भी।
कीचड को मान सकते है जन्नत भी
गधी लग सकती हे परी से बढ़ कर।

चाह ने क्या नहीं करवाया
भटकाया, तडपाया, तरसाया, दुख दिखाए।
चाह के मारे जान फसी आफत मे।
ज्ञान था, भान था
मन को समझाने का अभियान था,
लेकिन नतीजा वही--ढाक के तीन पात।

भीतर की आवाज
मन मानता नहीं था,
रुला बहुत तो देने लगा तवज्जो।
समझ में आया
कि आवाज के मुताबिक चलने पर ही मुमकिन हे
चाह पूरी हो पाना
महफूज रह पाना
वर्ना यह हो कि चाह मिले न राह

तीर-तुक्का

मार लिया तीर तो हो गए कुप्पा,
सोचा नहीं कि चला रहे हो तो कभी न कभी मारोगे ही।
लगा नही तुक्का भी तो सिकुड गए छुइ-मुइ-सा,
सोचा नही कि भेद सकता है कभी तुक्का भी लक्ष्य को।
पर हात ही क्यो हो कभी कुप्पा, कभी छुई-मुई ?
क्यो नहीं करते ऐसा
कि कमल की तरह हमेशा रहो खिले खिले ?

नया पथ

मै जीता रहा बदहवासी म
दुर्गुणो की मार खाता आया।
मानता रहा जिदगी इसी को
सदा ही स्वय को विकृत पाया।।

दीखने लगी फिर रोशनी नई
हर श मजर को अभिनव पाया।
शब्द वही थे किन्तु अर्थ बदले
ढेरा सकून हृदय मे समाया।।

यह पथ नया हागा स्वर्णिम, किन्तु
हर बार चलने से हिचकिचाया।
हितकर ही होगा नयापन सदा
पूणत आश्वस्त ना हो पाया।।

बोध हो चुका खुद का जग का ता
नयापन मुझे अपनाना होगा।
नई उमगा नए विचारा से
जीवन हमेशा सजाना हागा।।

भीतर-बाहर

व्यस्त हो जाता हू जब
भीतर की दुनिया मे,
खोता हू दुनिया बाहर की।

मसरूफ होता हू जब
बाहरी क्रियाकलापो म,
अनजान रह जाता हू भीतर से।

एक ही ह दोनो दुनियाए
फिर भी विभाजित इस तरह
कि ध्यान बट जाता है
कभी भीतर, कभी बाहर।

निर्झरता

भाव-प्रवाह बहता हे
निर्झर की तरह
शात, कलकल, निर्बाध।

अवरोध ह भी तो
मामूली से लगते ह,
पार जिन्ह करते हुए
मोड नये-नये खिलते ह
देते ह कलात्मकता, नया बोध, नई दिशा।
सतत दोडता प्रवाह
कितना सुदर नजर आता हे।

पहले था चिर अवरुद्ध-सा
पोखर की तरह
कभी कभी हवा के झोको से उठती तरगे
भ्रम पदा करती थीं।

पोखर से निर्झर तक
कष्टप्रद यात्रा के पश्चात
निझर की शांति, लय, निरतरता
लगती हे अद्भुत, विश्वस्त, शक्तिमय
जैसे सिद्धि की पूर्ण प्रतीति।

झुंझलाहट

झुझलाहट होने लगी है खुद पर।
क्यो बार-बार ध्यान जाता है
बेचैनी के अहसास पर ?
इसी की बदालत बेचेनी
सिर पर चढती जाती ह
जाने क्या-क्या चिताए कराती है
ठडा पसीना छूटने लगता हे
जो करना चाहिए, नही कर पाता।

अजीब बात ह,
बेचेनी की कलाबाजी समझ मे आई ह
सकून का मर्म जानने के बाद।
मर्म तो जाना है मगर
सकून हासिल नही कर पाया हू।
इसकी ओर कदम बढाता हू
जतन करता हू,
मगर बेचनी घसीट ले जाती ह
असहायता की आर।
ऐस म झुझलाहट होती हे।

सुखद परिवर्तन

उस एक असफलता के लिए
दोप खुद को देता रहा
होता रहा ख़ुद से लाँछित वार-वार।
विश्लेपित मन को करता रहा कि
मेरा दोप कहा था, क्या था, कैसे था ?
ग्लानि से स्वय को घटियाता रहा।
घुलता रहा विप कितना ही
मन म, जीवन मे।

वर्पो पहले आभास हुआ था
कि लगे रहो सत्य की खोज मे
वह काम हो जाएगा।
पर खाज इतनी सहज, सरल, स्वाभाविक कहा थी ?
जाने कितनी लबी हो सकती थी
जबकि काम करना था शीघ्रातिशीघ्र।
फिर इसके लिए सत्य की खोज ?
कोई तुक नजर नही आती थी। खोज माना कि मुझे करनी थी,
मगर हो सकती थी वाद मे भी
इसलिए खोज की कोशिश मे जम नही सका
अफसोस कि काम भी न कर सका

असफल ही असफल रहा।
कितने ही अनुभवो, अनुभूतियो, अनहोनिया से
गुजरने के बाद
खाज मे जुटा तो क्या,
हर काम सही, सरल, साधारण जान पडने लगा।
तब से हसी आती है स्व-प्रताडना पर
जीवन की जटिलताओ पर आश्चर्य होता है।
गर्व होता है सही राह पर पहुचने का,
जो ले जाती है उस मंजिल को
जिसम समाहित है मंजिले सभी।

अब म उत्साहित करता हू ख़ुद का,
प्रेरित करता हू।
शात, सक्रिय, प्रमुदित, आश्वस्त रहता हू।
सच, कितना सुखद परिवर्तन हुआ है
मेरे मन मे, जीवन मे।

सफलता-विफलता

सफलता से मिलती है खुशी कितनी
लगता ह, इससे बढ कर ख़ुशी नहीं कोई।
होता है जग मे जयजयकार
खुद पर एतमादी बढ जाती ह।
मगर खुशी पर लगा कर विराम
सोचें कुछ क्षण ठहर कर
चली आती है यादे सिलसिलेवार
प्रदर्शित करती हुइ
दुख, कठिनाइयो, अपयश के दिन
सकल्प, साहस पुन पुन जागृत करने के प्रयास
जमाने से ज्यादा खुद से सघर्ष
कठिनाइयो से अधिक दुगुणो पर विजय का पराक्रम।
तब विफलताआ को विफल करने के सफल प्रयासो पर
महसूस होती है सच्ची खुशी,
समझ म आ जाती ह गरिमा मनुष्य की।

लाजमी

कामयाब जो है दुनिया मे
या खुद को कहता फिरता है,
क्या खुश ह वह ?

खुश होना, फिर पछताना
हसते हसते सोना, मगर उठ कर रोना
यही कामयाबी ह क्या ?

आखिर क्या है कामयाबी ?
अधिकाधिक धन अजित करना
या उच्च पद गारव
या यश-पताका
या आजीविका मे द्रुत प्रगति
या दायित्व का सफल निवाह
या सपूण आराग्य
या य सभी मिल कर ?
मगर सब मिल कर हाना कहा ह ?

या फिर कामयाबी का मतलब ह
हमशा खुश रहना।
कहत है, छिपा है इसम

तो पूर्णतया न सही,
जितना सम्भव हो
खुश रहना क्या लाजमी नहीं है ?

पहला सुख

रोज कुछ नया नया सीखता हू
भूले जानता और सुधारता हू।

पहले सी बात अब नहीं रही।
नया नया करना
भूल समझना-सुधारना
झझट सा लगता था।
इतनी काफ़्त होती थी
कि खुद पर ही झुझलाता था।

अब यह आलम हे
कि नयेपन मे नया लुत्फ आता हे
भूल समझने पर मन का क्षितिज बढ जाता हे
परिष्कार से अभिनव सूरज उग आता है
नूतन किरणा से जीवन निखरता जाता है
मन अद्भुत खुशी म झूम झूम कर गाता हे
हर दिन जीवन का पहला सुख बन जाता ह।

सागर

क्या यह भय
आशका है ?
सागर चाहा था
कम कुछ नहीं।

मिल गया है सागर
विशाल समृद्ध
और छार नहीं
तन्न नही
जसे खुशी का पार नही,
मगर कर्त्तव्य का खारापन भी है।
इसके बगर सागर होता नहीं है।

ख़ूबसूरत लोको,
जीव-जतुओ, वनस्पतियो,
मोहक रश्मियो की निधियो स
धन्य हू।
बनते हुए विशालतर चाहता हू
सबको मिले सागर
ख़ुशियो की समृद्धि
कत्तव्य का खारापन।

सत्य-सत्य

जरूरी नहीं कि सत्य
सदा वाछनीय हो,
सभव ह
विवादकर, सहारक ओर आत्मघातक हा।

जरूरी नही कि सत्य
सदा कटु हो,
सम्भव हे
प्रीतिकर, मधुर ओर हितकारी हा।
वल्कि जरूरी हे कि
ऐसा ही हो।
यही सत्य
सत्य होता ह।

इसके लिए मगर चाहिए
निष्ठा समपण आर साधना ही नही
वुद्धि सद्भावना आर चतुराइ भी।

दगा की कीमत

दगा करना आसान है
मुश्किल है कीमत चुकाना।
करते जो दूसरो से
कीमत चुक ही जाती है।
मगर खुद से करने की
चुकती नहीं जीवन-पर्यन्त
शायद जनम-जनम तक।

सफाई

निर्मल सरोवर मे
कचरा साफ नजर आता है।
यह पहले नही था निर्मल।
स्वच्छ करना शुरू किया
अधिक गदा दिखने लगा।
ज्यो-ज्यो होती रही सफाई
निर्मलतर हो गया
पर नजर आने लगा अधिकाधिक कचरा।

यह एक कठिन प्रक्रिया थी।
अधिकाधिक कचरा दिखने पर भी
किसी तरह जारी रही।
एक दिन तुलनात्मक रूप से सोचा
शुरू के दिन और आज की घडी के बारे मे,
तो अहसास हुआ
कि कचरे मे कितना फर्क था।

यहा बन गया स्रोत मेरी प्रेरणा का
होती गई मेरी चेष्टा अधिक सशक्त,
तब से सन्तोष करके नही बैठ पाया हू आज तक।
सघर्ष का दौर बदस्तूर जारी है

आर रहगा,
जब तक कायम ह किंचित मात्र भी कचरा।

यह सरोवर ह मन
चल रही है अनवरत सफाइ
दुगुणा की, मलिनता की।

आभा

सागर की अतल गहराइयो से
उठ रहा हू ऊपर धीरे-धीरे
निर्लिप्त सभी गतिविधियो से रहते हुए।
यह ऊपर उठना
मेरा अधिकार है तो कर्त्तव्य भी।
विश्वास है,
धरती की साफ खुली हवा मे
ले सकूगा उन्मुक्त सास।
सूय की आभा मे
चमकता होगा चेहरा मेरा
जिससे फैलगी
रोशनी दुनिया म।

श्राप से मुक्ति

तपस्या की थी
सिद्धि के वरदान के लिए
परतु मिला नहीं।

ऐसा क्यो हुआ ?
सोचता रहा।
प्रार्थना भी करता रहा।
प्रसन्न हो कर आखिर
किया तपस्या ने मार्ग-दर्शन–
सिद्धि मिलेगी अवश्य,
किंतु वरदान से नहीं।
यह अनुचित है।

वरदान चाहता था
किसी आकर्षण के कारण।
निषेध होने पर
हठ छोड दिया
सयम-जाप करने लगा,
यद्यपि तडपता भी रहा
आकर्षण के लिए,
जो बन गया था श्राप।

तपस्या का वरद हस्त
था सिर पर,
बदली स्थितिया
दूरिया मिली।
आकर्षण का चद्रमा
रह गया झिलमिल तारा।

समय की गाडी चलती रही
तड़पन उम्र-सी घटती रही।
अतत फल मिला
कि दिया सिद्धि ने
मोन आशीर्वाद
भ्रातिया मिटी,
आकर्षण रह गया
अस्तित्त्वहीन।
मिल गई मुक्ति
श्राप से।

स्वीकारोक्ति

फल चखा
विप मिला।
फिर भी न जाने
किसके हाथों
हो कर मजबूर
बार-बार चखा।

खुद को कहा
बुरा भला।
सकल्प लिया
दोहराता रहा।
पर सब टूट गया
जाने किस स्वर-लहरी मे
कब बह गया।

चलता रहा यह सिलसिला।
आखिर मे था विप ही विप
विप का सागर था।
सच मे, दोप था किसका ?
ख़ुद का ही तो था।
नाम चाहे ले सकता हू
किसी सनम का
या जगत का।

ख़ुशी का बोध

हुआ नया ही बोध खुशी का।
ख़ुशिया मिली यो चाहे कितनी ही,
मगर क्या होती है ख़ुशी
यह जान पडा आज ही
जब कई पुरानी चिताओ का हो गया अत।

मालूम हुआ
कि खुशी होती नहीं सुख हासिल करने म
होती है दुख मिटाने म।
दुनिया मे सुख ऐसे है
हाथ मिलाए रहते ह दुखो से
आते दिखते ह सुख देने के लिए
दे कर दुख चलते बनते है।
किन्तु हो जाए अत दुखा ओर चिताओं का
तो शेष रह जाती है
सिर्फ़ खुशी
सच्ची खुशी।

सकून

यह एक सकून ही तो है
जो हर पल साथ देता है।

सबंध बनते बिगड़ते
उलझन सुलझतीं, नई आतीं
स्थितियां बदलती रहतीं।
भाव, विचार, अनुभूतियां
कभी हसाते, कभी रुलाते
अक्सर फसाते।

मझधार से पार लगाने वाला
हर भवर से उबारने वाला
आसू मोती सा सजाने वाला
कांटों मे फूल उगाने वाला
यह एक सकून ही तो है।

सकून है जैसे—
चादनी का उजास
हवाओं की खुशबू
नदियों का सौंदर्य
मा की लोरी
निश्चितता का स्पर्श
अमृत का स्वाद।

कामना-मुक्ति

कामनाओ से मुक्त हो कर
अतरिक्ष यात्री की तरह
भारहीनता महसूस रहा हू।
सारी गुत्थिया जैसे
टूट कर धुल गई ह।
मन स्वच्छ आगन की तरह
पवित्र हो गया हे।
सब कुछ एकबारगी ही
शात हो गया हे।
क्षोभ विकार, आवेग
स्पदित नही हो रहे।
निष्पृहता, विश्राति स्थायित्व
छा गए ह मन म, जीवन म।

रूप

तरी तरह-तरह की तसवीर
देखता आ रहा हू वरसा से,
तुझे अभी तक नही दखा।
देखूगा तो कैसा लगेगा ?
किस तसवीर की तरह दिखागे ?

तेरी तसवीर देखती ह सारी दुनिया
जैसे ताजमहल की तसवीर को।
मैंने जब सचमुच ताजमहल देखा
ता लगा कि उसकी तसवीर ही देख रहा हू।
तुझे दखने पर भी
कहीं ऐसा तो नहीं होगा ?

कोइ नही जानता तेरा असली रूप।
जिस किसी ने देखा भी
दुनिया को नही दिखाया।
तुम सचमुच कसे दिखते हा ?
कहीं सभी तसवीरा से भिन्न ता नही ?

आशकित हू कि
तुझ असली रूप म पहचान पाऊगा या नही ?
सुना है कि
तुम हर पल अपना रूप बदलते रहते हो।

धीरज

तुमने कराया इतजार बार-बार।
कितना परेशान हुआ
निराश हाता रहा
टूट सा गया।

कई बार मन हुआ
कि छोड दू तेरी राह,
पर मजबूरी थी कि
निरी राह नही,
बन गई थी कर्त्तव्य की अनिवार्यता।

जीवन के हर मोड पर
जारी रखा तुमने इतजार कराना।
धीरे धीर महसूस किया
कि ऐसी कोई राह नही बची थी,
जिस पर चल सकता तुम्हारे बगर।

आश्चर्य से सोचने लगा—
यह तुम्हारा प्रेम था
या अनुशासन का पाठ्य-क्रम ?
प्रेम ही प्रेम म दिया तुमने
अनुशासन इतजार के रूप म।
तपस्या मे मिला मुझे यह वरदान
कि धीरज सीख गया।

तुम्हारा मैं

दुनिया की ख़ुशियों के पीछे भटकता रहा
जिदगी के कर्त्तव्य निभाने मे अटकता रहा।
ऐसा नहीं कि तुम्हे भूल गया,
तुम्ह भी खोजता रहा।
ख़ुशिया की चाह में
कर्त्तव्य की पुकार म
सदा आकुल, व्यथित, आशंकित रहा।

ख़ास परेशान रहा
खाली क्षणो से गुजरते हुए
व्यर्थता महसूसता
लक्ष्यहीनता का बोझ झेलता,
लगता कि जीवन सुखमय नही
सार्थक नही
सफल नहीं।

पुकारता रहा तुम्हे नाम ले-ले कर
व्यथा के क्षणो मे, सकट की घडिया म।
यह नही जाना-सोचा-समझा कि
तुम्ही तो हो ख़ुशियो और कर्त्तव्यों के देवता।
लबी साधना के पश्चात सच को जाना

तुमको सर्वस्व पहचाना, शेष नगण्य माना।
तब हुआ अहसास
सताप, सकून सत्य, सार्थकता का।

अब तो जीवन का कोई क्षण
शून्य, रिक्त व्यर्थ, बोझिल नहीं होता।
कुछ नही करते हुए भी कार्यरत रहता हू
सब कुछ करत हुए भी प्रशात रहता हू।

तुम्हे हरदम साथ रखता हू।
किसी खुशी, किसी कर्त्तव्य की ख़ातिर
आकुलित नही होता कभी।
अब म हू
पूर्ण
प्रसन्न
सफल
तुम्हारा म।

•••



कवि-परिचय

शिक्षा
एम ए अग्रजी साहित्य
राजस्थान विश्वविद्यालय

प्रकाशित काव्य-पुस्तकें

- ठहाक मार कर हसो
- अगले जनमा की वात कर (गजल
- आप ही ता मर गुरु ह
- अपने-अपने चेहर
- हर पल महाभारत

सपर्क-सूत्र
चादपोल गेट के पास,
जोधपुर 342001
फोन 644127